I J C R M
International Journal of Contemporary Research In Multidisciplinary

Research Article

National Interest versus Regional Interest in a Multi-Party System: An Analytical Study

बहुदलीय व्यवस्था में राष्ट्रीय हित बनाम क्षेत्रीय हित: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Dr. Ashok Kumar Meena
Assistant Professor, Political Science, Government College, Masalpur, Karauli, Rajasthan, India

Corresponding Author: * Dr. Ashok Kumar Meena

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.21841121

Abstract

One of the most prominent features of the Indian political system is its multi-party character and the continuous emergence of regional aspirations within it. For three decades after independence, there was a period of one-party dominance, but from the latter half of the 1980s, the multi-party system gave a new direction to Indian democracy. This research paper presents an in-depth and detailed analysis of the conflict, balance, and dynamics that arise between 'national interest' and 'regional interest' within a multi-party system. The study examines how regional political parties carved out a place on the national stage by advancing their provincial identity, linguistic sensitivities, and economic demands. The paper highlights that although the aggressive assertion of regional interests has, on several occasions, created challenges such as policy paralysis, national security concerns, and deadlock in foreign policy, it has also made Indian federalism more inclusive, democratic, and dialogic. Ultimately, the paper concludes that national interest and regional interest are not opposed to one another but complementary, and that a strong multi-party democracy is one that accommodates provincial diversities while achieving an integrated national goal.

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था की सबसे प्रमुख विशेषताओं में से एक इसका बहुदलीय स्वरूप और इसमें क्षेत्रीय आकांक्षाओं का निरंतर प्रस्फुटन है। स्वतंत्रता के उपरांत तीन दशकों तक एकदलीय प्रभुत्व का कालखंड रहा, परंतु 1980 के दशक के उत्तरार्द्ध से बहुदलीय व्यवस्था ने भारतीय लोकतंत्र को एक नई दिशा दी। प्रस्तुत शोध पत्र बहुदलीय व्यवस्था के अंतर्गत 'राष्ट्रीय हित' और 'क्षेत्रीय हित' के मध्य उत्पन्न होने वाले द्वंद्व, संतुलन और गतिशीलता का एक गहन और विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है। यह अध्ययन इस बात का परीक्षण करता है कि किस प्रकार क्षेत्रीय राजनीतिक दलों ने अपनी प्रांतीय पहचान, भाषाई संवेदनशीलता, और आर्थिक मांगों को आगे बढ़ाते हुए राष्ट्रीय पटल पर स्थान बनाया। शोध पत्र में यह रेखांकित किया गया है कि यद्यपि क्षेत्रीय हितों की आक्रामक अभिव्यक्ति ने कई बार नीतिगत पंगुता, राष्ट्रीय सुरक्षा चिंताओं, और विदेश नीति में गतिरोध जैसी चुनौतियाँ पैदा की हैं, किंतु इसने भारतीय संघवाद को अधिक समावेशी, लोकतांत्रिक और संवादात्मक भी बनाया है। अंततः, यह पत्र यह निष्कर्ष निकालता है कि राष्ट्रीय हित और क्षेत्रीय हित एक-दूसरे के विरोधी न होकर पूरक हैं, और एक सशक्त बहुदलीय लोकतंत्र वही है जो प्रांतीय विविधताओं को समेटते हुए अखंड राष्ट्रीय लक्ष्य की प्राप्ति करे।

Manuscript Information

- **ISSN No:** 2583-7397
- **Received:** 10-09-2025
- **Accepted:** 26-10-2025
- **Published:** 30-10-2025
- **IJCRM:**4(5); 2025: 672-677
- **©2025, All Rights Reserved**
- **Plagiarism Checked:** Yes
- **Peer Review Process:** Yes

How to Cite this Article

Meena A K. National Interest versus Regional Interest in a Multi-Party System: An Analytical Study. Int J Contemp Res Multidiscip. 2025;4(5): 672-677.

Access this Article Online

www.multiarticlesjournal.com

KEYWORDS: Multi-party system, national interest, regional interest, federalism, coalition politics, democratization, policy-making.

© 2025 Dr. Ashok Kumar Meena. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

1. प्रस्तावना

भारत जैसे विशाल, बहु-सांस्कृतिक, बहु-भाषाई और विविधतापूर्ण देश में राजनीति का स्वरूप कभी भी एकरूपी नहीं हो सकता। भारतीय संविधान के प्रथम अनुच्छेद में ही घोषित किया गया है कि "भारत, अर्थात इंडिया, राज्यों का एक संघ होगा।" यह उक्ति स्पष्ट करती है कि भारतीय राष्ट्र-राज्य का अस्तित्व उसके घटकों यानी राज्यों और उनमें निवास करने वाली विविध सांस्कृतिक संस्थाओं के समावेशन पर टिका है।

राजनीतिक व्यवस्था के दृष्टिकोण से, लोकतंत्र में राजनीतिक दल जनता की आकांक्षाओं को शासन तक पहुँचाने वाले सबसे सशक्त माध्यम होते हैं। भारत में बहुदलीय व्यवस्था (Multi-Party System) का विकास इसी विविधता की स्वाभाविक परिणति है। जब राष्ट्रीय दल समाज के निचले या प्रांतीय स्तर पर उभरती हुई विशिष्ट आकांक्षाओं को संबोधित करने में असमर्थ रहे, तब क्षेत्रीय दलों का जन्म हुआ।

बहुदलीय व्यवस्था में दो प्रमुख बल निरंतर कार्यरत रहते हैं:

1. **केन्द्राभिमुख बल (Centripetal Force):** जो राष्ट्रीय एकता, अखंडता, संप्रभुता और एकसम आर्थिक विकास यानी **'राष्ट्रीय हित'** का प्रतिनिधित्व करता है।
2. **केन्द्रापसारक बल (Centrifugal Force):** जो प्रांतीय पहचान, स्थानीय संसाधनों पर अधिकार, भाषाई स्वायत्तता और सामाजिक न्याय यानी **'क्षेत्रीय हित'** को प्राथमिकता देता है।

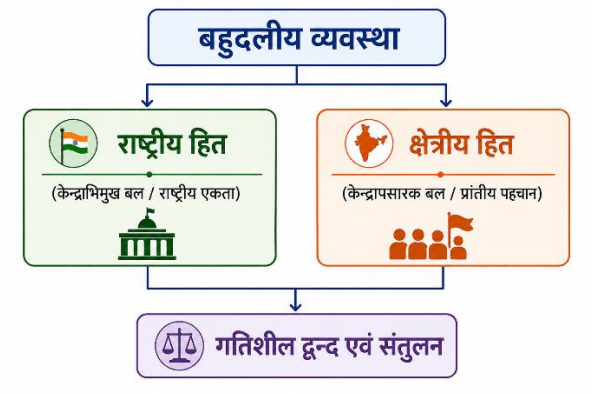

इन दोनों बलों के मध्य का तनाव और सामंजस्य ही आधुनिक भारतीय राजनीति की केंद्रीय कथावस्तु है। यह शोध पत्र बहुदलीय व्यवस्था के संदर्भ में राष्ट्रीय हित और क्षेत्रीय हित के मध्य संबंधों का व्यापक, सैद्धांतिक और व्यावहारिक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

2. सैद्धांतिक एवं अवधारणात्मक ढाँचा

राष्ट्रीय हित और क्षेत्रीय हित के द्वंद्व को समझने के लिए दोनों अवधारणाओं के सैद्धांतिक अर्थ और उनकी सीमाओं को स्पष्ट करना अनिवार्य है।

2.1 राष्ट्रीय हित की अवधारणा

'राष्ट्रीय हित' (National Interest) किसी भी राष्ट्र-राज्य की वह मूल चेतना है जो उसकी संप्रभुता, क्षेत्रीय अखंडता, आंतरिक सुरक्षा, आर्थिक समृद्धि और अंतर्राष्ट्रीय पटल पर उसके स्वाभिमान की रक्षा करती है। राष्ट्रीय हित के अंतर्गत निम्नलिखित तत्व समाविष्ट होते हैं:

- **सुरक्षा एवं अखंडता:** देश की सीमाओं की बाह्य आक्रमणों से रक्षा और आंतरिक विखंडन को रोकना।
- **आर्थिक स्वावलंबन:** एक एकीकृत राष्ट्रीय बाज़ार, मुद्रा स्थिरता, और समग्र विकास।
- **विदेश नीति में एकरूपता:** अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में राष्ट्र की ओर से एक स्वर में बोलना।
- **संवैधानिक सर्वोच्चता:** संविधान के मूल्यों और लोकतांत्रिक संस्थाओं की निष्ठा।

2.2 क्षेत्रीय हित की अवधारणा

'क्षेत्रीय हित' (Regional Interest) किसी विशिष्ट भौगोलिक, भाषाई, सांस्कृतिक या ऐतिहासिक क्षेत्र के निवासियों की साझी आकांक्षाओं को निरूपित करता है। यह निम्नलिखित तत्वों पर आधारित होता है:

- **सांस्कृतिक एवं भाषाई पहचान:** स्थानीय भाषा, साहित्य और सांस्कृतिक धरोहर का संरक्षण।
- **संसाधनों पर स्थानीय नियंत्रण:** जल, खनिज, भूमि और रोजगार के अवसरों में स्थानीय निवासियों (भूमिपुत्र) को प्राथमिकता।
- **असंतुलित विकास का विरोध:** केंद्र द्वारा किसी क्षेत्र विशेष की उपेक्षा के विरुद्ध आवाज़ उठाना।
- **स्वायत्तता की मांग:** संघीय व्यवस्था के भीतर राज्यों को अधिक वित्तीय और प्रशासनिक अधिकार देना।

2.3 बहुदलीय व्यवस्था का सिद्धांत

मॉरिस दुवर्जर (Maurice Duverger) के राजनीतिक दलों के सिद्धांत के अनुसार, अनुपातिक प्रतिनिधित्व और बहु-सांस्कृतिक समाज प्रायः बहुदलीय व्यवस्था को जन्म देते हैं। भारत में बहुदलीय व्यवस्था केवल राजनीतिक विकल्पों की संख्या मात्र नहीं है, बल्कि यह भारतीय समाज के गहरे सामाजिक, जातीय और प्रांतीय विभाजनों का राजनीतिक प्रतिबिंब है।

3. भारतीय राजनीति में बहुदलीय व्यवस्था का विकासक्रम

भारतीय राजनीति में राष्ट्रीय हित और क्षेत्रीय हित का संतुलन समय के साथ परिवर्तित होता रहा है। इसे मुख्य रूप से चार चरणों में देखा जा सकता है:

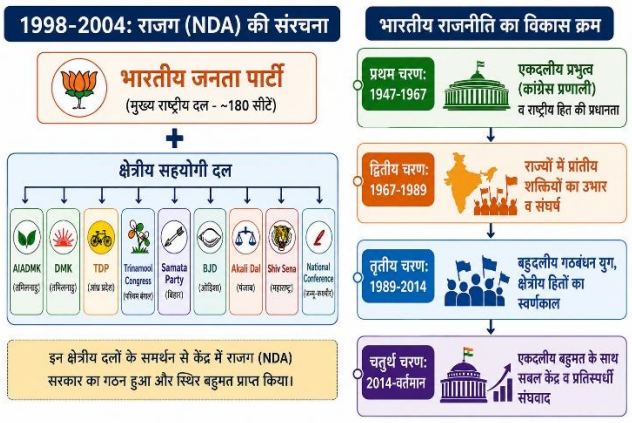

© 2025 Dr. Ashok Kumar Meena. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

3.1 प्रथम चरण: एकदलीय प्रभुत्व का काल (1947-1967)

स्वतंत्रता के पश्चात् प्रथम दो दशकों तक 'कांग्रेस प्रणाली' का प्रभुत्व रहा। रजनी कोठारी के अनुसार, कांग्रेस स्वयं में एक 'गठबंधन' की भांति कार्य करती थी जहाँ प्रांतीय गुटों के हितों को पार्टी के भीतर ही सुलझा लिया जाता था। इस काल में 'राष्ट्रीय हित' (राष्ट्र निर्माण, औद्योगीकरण, और सुरक्षा) सर्वोपरि रहा, यद्यपि 1956 में भाषाई आधार पर राज्यों का पुनर्गठन क्षेत्रीय हितों की पहली बड़ी विजय थी।

3.2 द्वितीय चरण: प्रांतीय शक्तियों का प्रथम उभार (1967-1989)

1967 के विधानसभा चुनावों में 9 राज्यों में गैर-कांग्रेसी सरकारें बनीं। गैर-कांग्रेसवाद के नारे के साथ क्षेत्रीय ताकतों ने सिर उठाया। इस काल में केंद्र और राज्यों के बीच टकराव बढ़ा। द्रविड़ मुनेत्र कषगम, अकाली दल और नेशनल कॉन्फ्रेंस जैसी शक्तियों ने प्रांतीय स्वायत्तता की पुरजोर वकालत की। आनंदपुर साहिब प्रस्ताव (1973) क्षेत्रीय स्वायत्तता का एक उग्र दस्तावेज बनकर सामने आया।

3.3 तृतीय चरण: बहुदलीय गठबंधन का दौर (1989-2014)

यह चरण क्षेत्रीय दलों के उत्कर्ष का स्वर्णकाल था। केंद्र में किसी भी एक दल को स्पष्ट बहुमत न मिलने के कारण राष्ट्रीय मोर्चे, संयुक्त मोर्चे, राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) और संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (संप्रग) जैसी गठबंधन सरकारें बनीं। तेलुगु देशम पार्टी, समाजवादी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी, राष्ट्रीय जनता दल, तृणमूल कांग्रेस, और बीजू जनता दल जैसे प्रांतीय दलों ने केंद्र सरकार की नीतियों, बजटों और मंत्रियों के चयन में निर्णायक भूमिका निभाई।

3.4 चतुर्थ चरण: एकदलीय बहुमत और प्रतिस्पर्धी संघवाद (2014 से वर्तमान)

2014 और 2019 के आम चुनावों में भारतीय जनता पार्टी को पूर्ण बहुमत प्राप्त हुआ। इससे केंद्र में एक सशक्त सरकार बनी, किंतु बहुदलीय व्यवस्था का ढांचा समाप्त नहीं हुआ है। वर्तमान में राज्यों के स्तर पर क्षेत्रीय दल अत्यंत मजबूत हैं, जिससे राष्ट्रीय और क्षेत्रीय हितों के बीच 'प्रतिस्पर्धी एवं सहकारी संघवाद' का नया स्वरूप उभरा है।

4. राष्ट्रीय हित और क्षेत्रीय हित के मध्य द्वंद्व के प्रमुख क्षेत्र

बहुदलीय व्यवस्था में जब क्षेत्रीय दल राष्ट्रीय स्तर पर शक्तिशाली हो जाते हैं, तो कई संवेदनशील मुद्दों पर राष्ट्रीय हित और क्षेत्रीय हित आपस में टकराते हैं।

4.1 विदेश नीति और अंतर्राष्ट्रीय संबंध

पारंपरिक रूप से विदेश नीति को विशुद्ध रूप से राष्ट्रीय हित का विषय माना जाता है, जिसमें केंद्र सरकार का पूर्ण नियंत्रण होता है। परंतु बहुदलीय गठबंधन काल में क्षेत्रीय दलों ने विदेश नीति को प्रांतीय राजनीति का बंधक बनाया:

- **भारत-श्रीलंका संबंध:** तमिलनाडु के क्षेत्रीय दलों (द्रमुक और एआईएडीएमके) ने श्रीलंकाई तमिलों के मुद्दे पर केंद्र सरकार की कूटनीति को निरंतर प्रभावित किया। 2013 में संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद (यूएनएचआरसी) में श्रीलंका के विरुद्ध प्रस्ताव लाने के लिए केंद्र पर भारी दबाव बनाया गया, जिससे भारत की रणनीतिक विदेश नीति प्रभावित हुई।
- **भारत-बांग्लादेश संबंध:** 2011 में भारत के प्रधानमंत्री की ढाका यात्रा के दौरान पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री और तृणमूल कांग्रेस की नेता ने तीस्ता जल बंटवारे समझौते का कड़ा विरोध किया और हस्ताक्षर नहीं होने दिए। इसने दो पड़ोसी देशों के बीच द्विपक्षीय संबंधों को गहरा झटका दिया।
- **भारत-अमेरिका परमाणु समझौता (2008):** वामपंथी दलों ने
- राष्ट्रीय हित के नाम पर इस समझौते का विरोध करते हुए सरकार से समर्थन वापस ले लिया, यद्यपि बाद में अन्य क्षेत्रीय दल (समाजवादी पार्टी) के समर्थन से सरकार बची।

4.2 आंतरिक सुरक्षा और कानून व्यवस्था

सुरक्षा के मोर्चे पर राष्ट्रीय हित पूरे देश की संप्रभुता की मांग करता है, किंतु क्षेत्रीय दल अपने वोट बैंक और स्थानीय संवेदनाओं के कारण कई बार कठोर राष्ट्रीय फैसलों का विरोध करते हैं:

- **सीमा पार घुसपैठ और नागरिकता:** पूर्वोत्तर के राज्यों (जैसे असम, पश्चिम बंगाल) में अवैध प्रवासन और नागरिकता संशोधन अधिनियम (सीएए) को लेकर राष्ट्रीय सुरक्षा बनाम स्थानीय जनसांख्यिकीय व राजनीतिक हितों का भारी टकराव देखने को मिला।
- **आतंकवाद विरोधी कानून:** केंद्र द्वारा बनाए जाने वाले कठोर आतंकवाद विरोधी कानूनों (जैसे पोटा या एनआईए का अधिकार क्षेत्र) का कई क्षेत्रीय दलों ने यह कहकर विरोध किया कि यह राज्यों के पुलिस अधिकारों (राज्य सूची) का अतिक्रमण है।

4.3 आर्थिक नीतियाँ और अवसंरचनात्मक विकास

राष्ट्रीय हित में पूरे देश को एक एकीकृत आर्थिक बाज़ार बनाने और वैश्विक निवेश आकर्षित करने की आवश्यकता होती है, किंतु क्षेत्रीय दल अपने स्थानीय किसानों, छोटे व्यापारियों और मतदाताओं की रक्षा के नाम पर रुकावट डालते हैं:

- **प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI):** खुदरा क्षेत्र (रिटेल) में एफडीआई का कई क्षेत्रीय दलों (जैसे तृणमूल कांग्रेस, समाजवादी पार्टी) ने तीव्र विरोध किया, जिससे केंद्र सरकार को अपने फैसले वापस लेने पड़े या टालने पड़े।
- **वस्तु एवं सेवा कर (GST):** एक देश, एक कर की अवधारणा राष्ट्रीय हित में थी, परंतु राज्यों को अपने राजस्व का अधिकार

© 2025 Dr. Ashok Kumar Meena. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

खोने का डर था। बहुदलीय वार्ताओं और राज्यों को राजस्व क्षतिपूर्ति का आश्वासन देने के बाद ही इसे लागू किया जा सका।

- **भूमि अधिग्रहण और बुनियादी ढांचा:** माल भाड़ा गलियारा (फ्रेट कॉरिडोर), बुलेट ट्रेन, या बड़ी औद्योगिक परियोजनाओं के लिए भूमि अधिग्रहण का स्थानीय प्रांतीय दलों द्वारा विरोध किया जाना आम बात है।

4.4 जल और प्राकृतिक संसाधनों का वितरण

अंतर-राज्यीय नदी जल विवाद राष्ट्रीय एकता के लिए सबसे बड़ी चुनौती रहे हैं। कावेरी जल विवाद (तमिलनाडु बनाम कर्नाटक), सतलुज-यमुना लिंक नहर (पंजाब बनाम हरियाणा), और कृष्णा जल विवाद (आंध्र प्रदेश बनाम तेलंगाना) में क्षेत्रीय दलों ने चुनावी लाभ के लिए प्रांतीय भावनाओं को भड़काया। यहाँ क्षेत्रीय हित इतने आक्रामक हो जाते हैं कि वे सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों और राष्ट्रीय न्यायाधिकरणों के निर्णयों को भी चुनौती देने लगते हैं।

5. बहुदलीय व्यवस्था में क्षेत्रीय हितों का सकारात्मक योगदान

यह मानना एकपक्षीय होगा कि क्षेत्रीय हित केवल राष्ट्रीय हित में बाधा उत्पन्न करते हैं। वास्तव में, बहुदलीय व्यवस्था ने क्षेत्रीय हितों को स्वर देकर भारतीय लोकतंत्र को अत्यंत समृद्ध और मजबूत बनाया है।

5.1 लोकतंत्र का गहरा होना और समावेशन

योगेंद्र यादव के अनुसार, 1990 के दशक का बहुदलीय दौर भारतीय राजनीति का 'दूसरा लोकतांत्रिक उभार' था। प्रांतीय और स्थानीय दलों के माध्यम से अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी), अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और दूरस्थ क्षेत्रों के निवासियों को सत्ता में भागीदारी मिली। इससे लोकतंत्र केवल दिल्ली या एलीट वर्ग तक सीमित न रहकर गाँव और प्रांतीय गलियारों तक पहुँचा।

5.2 एकाधिकार और अधिनायकवाद पर रोक

जब केंद्र में किसी एक दल का अत्यधिक बहुमत होता है, तो सत्ता के केंद्रीयकरण और अधिनायकवाद की संभावना बढ़ जाती है। बहुदलीय व्यवस्था में क्षेत्रीय दल केंद्र की निरंकुशता पर एक संवैधानिक और राजनीतिक अंकुश (Checks and Balances) का कार्य करते हैं। वे केंद्र को मजबूर करते हैं कि वह कोई भी फैसला लेने से पूर्व सर्वसम्मति बनाए।

5.3 वास्तविक संघीय व्यवस्था का निर्माण

1989 से पूर्व, केंद्र सरकारें जब चाहें संविधान के **अनुच्छेद 356 (राष्ट्रपति शासन)** का दुरुपयोग करके विरोधी प्रांतीय सरकार गिरा देती थीं। बहुदलीय व्यवस्था के आगमन और क्षेत्रीय दलों की केंद्रीय सत्ता में निर्णायक भूमिका के कारण अनुच्छेद 356 का दुरुपयोग लगभग समाप्त हो गया। इससे भारत का संघवाद 'कागज़ी संघवाद' से बदलकर 'सच्चा संघवाद' बना।

5.4 उपेक्षित क्षेत्रों का विकास

पूर्व मुख्यधारा के राष्ट्रीय दल कई बार दूरस्थ राज्यों (जैसे पूर्वोत्तर भारत, उड़ीसा, या आंध्र प्रदेश) की उपेक्षा करते थे। क्षेत्रीय दलों (जैसे बीजू जनता दल, नॉर्थ ईस्ट डेमोक्रेटिक एलायंस, टीडीपी) ने अपने राज्यों के लिए विशेष पैकेज, आईआईटी, आईआईएम, और इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट हासिल किए, जिससे क्षेत्रीय असंतुलन कम हुआ।

6. राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय हितों के मध्य संतुलन के तंत्र

भारतीय संविधान और हमारी राजनीतिक प्रणाली में ऐसे कई प्रावधान और संस्थाएं हैं जो राष्ट्रीय हित और क्षेत्रीय हित के मध्य सेतु का कार्य करती हैं।

6.1 संवैधानिक संस्थाएं

1. **अंतर-राज्यीय परिषद (Inter-State Council):** संविधान के अनुच्छेद 263 के तहत गठित यह संस्था केंद्र और राज्यों के बीच विवादों के समाधान और नीतिगत समन्वय का मंच प्रदान करती है।
2. **वित्त आयोग (Finance Commission):** अनुच्छेद 280 के तहत गठित वित्त आयोग राष्ट्रीय कर राजस्व का केंद्र और राज्यों के बीच न्यायसंगत वितरण सुनिश्चित करता है, जिससे वित्तीय क्षेत्रीय असंतुलन दूर होता है।
3. **उच्चतम न्यायालय (Supreme Court):** जब भी राष्ट्रीय हित (केन्द्रीय कानून) और क्षेत्रीय हित (राज्य कानून) टकराते हैं, सर्वोच्च न्यायालय संविधान के संरक्षक के रूप में सीमाएं तय करता है।

6.2 नीति आयोग और सहकारी संघवाद

पूर्ववर्ती योजना आयोग के स्थान पर स्थापित **नीति आयोग (NITI Aayog)** की गवर्निंग काउंसिल में सभी राज्यों के मुख्यमंत्री शामिल हैं। यह 'टीम इंडिया' के विचार पर काम करता है, जहाँ राष्ट्रीय विकास के एजेंडे में क्षेत्रीय आकांक्षाओं को समाहित किया जाता है।

© 2025 Dr. Ashok Kumar Meena. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

6.3 जीएसटी परिषद (GST Council)

जीएसटी परिषद भारत में 'सहकारी संघवाद' का सबसे सफल और आधुनिक उदाहरण है। इसमें केंद्र के साथ-साथ सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के प्रतिनिधि बैठते हैं। यहाँ निर्णय केवल बहुमत से नहीं, बल्कि आम सहमति से लिए जाते हैं, जो यह दिखाता है कि राष्ट्रीय कर व्यवस्था में क्षेत्रीय हितों को कैसे सम्मानित किया जा सकता है।

7. चुनौतियाँ और भावी दिशा

बहुदलीय व्यवस्था में राष्ट्रीय हित और क्षेत्रीय हित के मध्य संतुलन बनाए रखना एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। भविष्य के लिए निम्नलिखित चुनौतियाँ और समाधान महत्वपूर्ण हैं:

7.1 प्रमुख चुनौतियाँ

1. **संकीर्ण वोट बैंक राजनीति:** कई बार क्षेत्रीय दल तात्कालिक चुनावी लाभ के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा, विदेश नीति या आर्थिक स्थिरता से समझौता करने को तैयार हो जाते हैं।
2. **संसाधनों की होड़ और मुफ्त की राजनीति (Freebies):** राज्यों द्वारा अत्यधिक लोकलुभावन घोषणाएँ राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था और वित्तीय अनुशासन पर दबाव डालती हैं।
3. **संसदीय गतिरोध:** बहुदलीय व्यवस्था में जब क्षेत्रीय दल राष्ट्रीय संसद में तख्तियाँ लेकर विरोध करते हैं, तो विधायी प्रक्रिया बाधित होती है।

7.2 संतुलन हेतु भावी मार्ग

- **विदेश नीति और सुरक्षा पर आम सहमति:** राष्ट्रीय सुरक्षा और विदेश नीति जैसे विषयों को दलगत और प्रांतीय राजनीति से ऊपर रखा जाना चाहिए। इसके लिए केंद्र सरकार को 'राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद' या संसदीय समितियों के माध्यम से क्षेत्रीय दलों के शीर्ष नेताओं को निरंतर विश्वास में लेना चाहिए।
- **संस्थागत संवाद की निरंतरता:** अंतर-राज्यीय परिषद और नीति आयोग की बैठकों को केवल औपचारिकता न बनाकर उन्हें नियमित और परिणामी बनाया जाना चाहिए।
- **राष्ट्रीय दलों का आंतरिक विकेंद्रीकरण:** राष्ट्रीय दलों को भी अपने संगठन में प्रांतीय नेताओं को पर्याप्त स्वायत्तता और सम्मान देना चाहिए, ताकि क्षेत्रीय असंतोष राष्ट्रीय दलों के भीतर ही संबोधित हो सके।

8. निष्कर्ष

बहुदलीय व्यवस्था में राष्ट्रीय हित बनाम क्षेत्रीय हित की बहस कोई शून्य-योग खेल (Zero-Sum Game) नहीं है, जहाँ एक की जीत दूसरे की हार हो। भारत जैसे बहुलतावादी और विशाल राष्ट्र में राष्ट्रीय हित कोई आसमान से टपका हुआ स्थिर विचार नहीं है, बल्कि यह देश के सभी क्षेत्रों, भाषाओं और संस्कृतियों की आकांक्षाओं का एकीकृत योग है।

यदि क्षेत्रीय हित राष्ट्र की धमनियों में बहने वाला रक्त हैं, तो राष्ट्रीय हित उस शरीर का मस्तिष्क और हृदय है जो पूरे ढांचे को एक सूत्र में पिरोए रखता है। 1989 से 2014 के गठबंधन काल ने यह सिद्ध किया कि क्षेत्रीय दलों के मजबूत होने से देश टूटा नहीं, बल्कि लोकतंत्र अधिक मजबूत और समावेशी हुआ। वहीं, 2014 के बाद के दौर ने यह दर्शाया कि एक मजबूत राष्ट्रीय सरकार भी तब तक प्रभावी ढंग से शासन नहीं कर सकती जब तक कि वह प्रांतीय आकांक्षाओं और राज्यों की भागीदारी को साथ न लेकर चले।

अंततः, भारत का भविष्य 'सहकारी, प्रतिस्पर्धी और सामंजस्यपूर्ण संघवाद' में निहित है। बहुदलीय व्यवस्था का ध्येय यह होना चाहिए कि क्षेत्रीय हितों को इस प्रकार मुखर किया जाए कि वे राष्ट्रीय हित के विशाल ताने-बाने को समृद्ध करें, न कि उसे कमजोर करें। जब राष्ट्रीय नीतियाँ क्षेत्रीय आवश्यकताओं को समझेंगी और क्षेत्रीय दल राष्ट्रीय उत्तरदायित्वों को स्वीकार करेंगे, तभी भारतीय लोकतंत्र अपने वास्तविक स्वरूप को साकार कर सकेगा।

संदर्भ सूची

1. अग्रवाल जेसी. भारत में गठबंधन राजनीति और क्षेत्रीय दल. आगरा: साहित्य भवन पब्लिकेशंस; 2009.
2. आज़ाद एमए. भारतीय संघवाद और क्षेत्रीय राजनीति. वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन; 2015.
3. कोठारी रजनी. पॉलिटिक्स इन इंडिया. नई दिल्ली: ओरिएंट लोंगमैन; 1970.
4. कोठारी रजनी. स्टेट अगेंस्ट डेमोक्रेसी: इन सर्च ऑफ ह्यूमेन गवर्नेंस. दिल्ली: अजंता पब्लिकेशंस; 1988.
5. कविराज सुदीप्त. द ट्रान्सफॉर्मेशन ऑफ इंडियन पॉलिटिक्स. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 1997.
6. गुहा रामचंद्र. इंडिया आफ्टर गांधी: द हिस्ट्री ऑफ द वर्ल्ड्स लार्जेस्ट डेमोक्रेसी. लंदन: मैकमिलन; 2007.
7. चक्रवर्ती विद्युत. फॉरजिंग पावर: कोएलिशन पॉलिटिक्स इन इंडिया. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2006.
8. जॉयल नीरजा गोपाल, जयल बीएन. द ऑक्सफोर्ड कम्पेनियन टू इंडियन पॉलिटिक्स. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2010.
9. द्विवेदी एसएन. भारतीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों की भूमिका. नई दिल्ली: अनामिका पब्लिशर्स; 2012.
10. दुवर्जर मॉरिस. पॉलिटिकल पार्टीज: देयर ऑर्गेनाइजेशन एंड एक्टिविटी इन द मॉडर्न स्टेट. लंदन: मेथुएन एंड कंपनी; 1954.
11. पालशिकर सुहास. इण्डियन डेमोक्रेसी: द चेंजिंग ट्रेंड्स. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2014.
12. भार्गव राजीव. सेक्युलारिज्म एंड इट्स क्रिटिक्स. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2010.

© 2025 Dr. Ashok Kumar Meena. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

13. मनोर जेम्स. इलेक्टोरल प्रोसेस इन इंडिया: ए स्टडी ऑफ द 1989 इलेक्शन्स. एशियन सर्वे. 1990;30(3):237-254.
14. यादव योगेंद्र. रीइन्वेंटिंग इंडिया: द सेकंड डेमोक्रेटिक अपसर्ज. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली. 1996;31(2):95-104.
15. यादव योगेंद्र, पालशिकर सुहास. फ्रॉम हंड्रेड टू मेनी: द रीस्ट्रक्चरिंग ऑफ द पार्टी सिस्टम इन इंडिया (1989-2004). इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली. 2006;41(51):5171-5183.
16. रुडोल्फ एलआई, रुडोल्फ एसएच. इन पर्सुइट ऑफ लक्ष्मी: द पॉलिटिकल इकॉनमी ऑफ द इंडियन स्टेट. शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस; 1987.
17. वर्मा एके. डेवलपमेंट ऑफ कोएलिशन पॉलिटिक्स इन उत्तर प्रदेश. द इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस. 2004;65(2):189-206.
18. शर्मा सीपी. भारतीय संघवाद और गठबंधन सरकारें. नई दिल्ली: अनामिका पब्लिशर्स; 2015.
19. शास्त्री संदीप, सूरी केसी, यादव योगेंद्र. इलेक्टोरल पॉलिटिक्स इन इंडियन स्टेट्स: लोक सभा इलेक्शन्स 2004 एंड बियॉन्ड. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2009.
20. सिंह एमपी, सक्सेना रेखा. इण्डियन फेडरलिज्म: स्ट्रक्चर, प्रोसेस एंड ट्रेंड्स. नई दिल्ली: पीएचआई लर्निंग; 2011.
21. हसन जोया. पार्टीज एंड पार्टी पॉलिटिक्स इन इंडिया. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2002.
22. हेथकॉटे बी. रीजनल पार्टीज एंड द फ्यूचर ऑफ इंडियन फेडरलिज्म. जर्नल ऑफ कॉमनवेल्थ एंड कम्पेरेटिव पॉलिटिक्स. 2001;39(1):45-62.

Creative Commons (CC) License

This article is an open-access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.

© 2025 Dr. Ashok Kumar Meena. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/